बुद्धि=मनीषा द्वारा; **ग्राह्यम्**=ग्रहणीय; **अतीन्द्रियम्**=इन्द्रियों से परे; **वेत्ति**=जानता है; **यत्र**=जिस अवस्था में; **न**=नहीं; **च**=तथा; **एव**=निःसंदेह; **अयम्**=यह योगी; **स्थितः**=स्थित हुआ; **चलति**=विचलित होता; **तत्त्वतः**=तत्त्व से; **यम्**=जिसे; **लब्ध्वा**=प्राप्त होकर; **च**=तथा; **अपरम्**=अन्य कोई; **लाभम्**=लाभ; **मन्यते**=मानता; **न**=नहीं; **अधिकम्**=अधिक (श्रेष्ठ); **ततः**=उससे; **यस्मिन्**=जिसमें; **स्थितः**=स्थित होने पर; **न**=नहीं; **दुःखेन**=दुःख द्वारा; **गुरुणा अपि**=बड़े से बड़े; **विचाल्यते**=चलायमान होता; **तम्**=उसे; **विद्यात्**=जानना चाहिए; **दुःखसंयोग**=सांसारिक संसर्ग से उत्पन्न दुःख को; **वियोगम्**=दूर करने वाले; **योगसंज्ञितम्**=योगरूप समाधि।

अनुवाद

योग की पूर्ण अवस्था को समाधि कहते हैं, जब योगाभ्यास के द्वारा चित्त सांसारिक क्रियाओं से बिल्कुल संयमित हो जाता है और विशुद्ध चित्त के द्वारा आत्मस्वरूप का दर्शन और आस्वादन सुलभ होता है। उस आनन्दमयी स्थिति में अनन्त रसानन्द में योगी दिव्य इन्द्रियों के द्वारा आत्मस्वरूप में रमण करता है। इस प्रकार निष्ठ योगी तत्त्व से कभी विचलित नहीं होता और इस सुख की प्राप्ति होने पर वह इससे अधिक दूसरा कुछ भी लाभ नहीं समझता। ऐसी स्वरूप-स्थिति को प्राप्त पुरुष बड़े से बड़े दुःखों के मध्य में भी इससे चलायमान नहीं होता। यह विषयसंग से उत्पन्न सम्पूर्ण दुःखों से वास्तव में मुक्ति है।।२०-२३।।

तात्पर्य

योगाभ्यास के द्वारा शनैः शनैः विषय-धारणा से अनासक्ति हो जाती है। यह योग का प्रमुख लक्षण है। इसके बाद योगी समाधि में स्थित हो जाता है, अर्थात् आत्मा तथा परमात्मा को एक समझने के भ्रम से मुक्त होकर दिव्य इन्द्रियों और चित्त द्वारा परमात्मा की अनुभूति करता है। योगमार्ग अधिकांश में पतञ्जलि की पद्धति पर आधारित है। अप्रामाणिक व्याख्याकार जीवात्मा तथा परमात्मा में अभेद को स्थापित करने का असत् प्रयत्न करते हैं और अद्वैतवादियों के मत में भी यही मुक्ति है। पर वे पातञ्जल योगपद्धति के यथार्थ प्रयोजन को नहीं जानते। पातञ्जल योगदर्शन ह्लादिनी शक्ति को स्वीकार करता है। अद्वैतवादी इस ह्लादिनी को नहीं मानते, क्योंकि उन्हें इससे अद्वैत-मत में बाधा उपस्थित होने का भय रहता है। ज्ञान और ज्ञाता में द्वैत है—यह अद्वैतवादियों को मान्य नहीं; पर इस श्लोक में दिव्य इन्द्रियों द्वारा ह्लादिनी के आस्वादन को स्वीकार किया गया है। योग के महान् प्रतिपादक पतंजलि मुनि ने भी इसकी परिपुष्टि की है। 'योगसूत्र' में महर्षि का उद्घोष है: **पुरुषार्थ शून्याना गुणानां प्रतिप्रसवः। कैवल्यं स्वरूप-प्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।।**

यह **चिति** अथवा अन्तरंगा शक्ति दिव्य है। पुरुषार्थ का अर्थ धर्म, अर्थ, काम और अन्त में, मोक्ष (परतत्त्व से एक होने का प्रयास) है। इस परतत्त्व से एक होने को ही अद्वैतवादी 'कैवल्य' कहते हैं। परन्तु पतंजलि के मत में कैवल्य